निःस्वार्थ देश-प्रेम से हो मलिनता मन की धुली
सो भूरिभोगी भूप से है धन्यतर कर्मठ कुली।

वक्तव्य

महात्माओं के चरित्र सर्वत्र शिक्षाप्रद और अनुकरणीय होते हैं। उनके जीवन की विशेषताएँ संसार के सामने नवीन आदर्श उपस्थित करती हैं। महात्मा गांधी के विचार, उनकी मनोवृत्ति और उनके आदर्श उनके व्यक्तित्व विशेष से संबंध रखते हैं। ऐसे पुरुष संसार में विरले हैं जो अपने चरित्र-बल से जनसाधारण को प्रभावित कर सकें और चरित्र-बल ही जिनके प्रयासों की सफलता का साधन हो। महात्मा गांधी उन्हीं लोक-दुर्लभ व्यक्तियों में से एक हैं। वह अपने उच्च, उदार, निर्भीक गंभीर और पवित्र चरित्र में अपना साम्य नहीं रखते। उनका मन वाणी और कर्म एक है—वह जो विचारते हैं वही कहते हैं जो कहते हैं वही करते हैं। वह आचरण के आचार्य हैं। उनका हृदय मानवी-प्रेम का पारावार है। परमात्मा में उनकी अविचल और असम्य श्रद्धा है। वह सत्य के सेवक हैं। सेवा के सिपाही हैं। धर्म उनकी ध्वजा है। सत्याग्रह उनका अमोघ अस्त्र है। अहिंसा उनका धर्म है। आत्मबल उनका तनुत्राण है। वह निर्भयता की मूर्ति हैं। सहिष्णुता के सम्राट हैं। दया के अवतार हैं। नम्रता के नीरनिधि हैं और पतितों के प्राणाधार हैं। उनके मत में घृणा का प्रतिकार प्रेम है। 'पराजय' शब्द उनके

कोश में ही नहीं। वह संघर्षशील है, कर्मवीर है। मातृभूमि के भक्त हैं, स्वतंत्रता के उपासक हैं, जीवन की परमोच्च सरलता उनका आत्म-त्याग का सुरभित सुमन है। वह अप्रतिम संन्यासी हैं। महात्मा गोखले के शब्दों में "चाहे वह सफल हों अथवा विफल, वह वीर की भाँति अंत तक लड़ते हैं और वह सामान्य मिट्टी में वीरों की सृष्टि करना जानते हैं।"

मैं महापुरुषों के जीवनचरित्रों को नवयुवकों की संपत्ति समझता हूँ। वह मेरे जीवन के आनंद की सामग्री रहे हैं। उनपर मेरा अगाध अनुराग है। मेरी सदैव इच्छा रहती है कि मेरे देश का युवकवर्ग महात्माओं के चरित चाहे वे किसी देश के हों, श्रद्धा-सहित पढ़े और उन्हें हृदयांकित कर जन्मभूमि के अभिमान का कारण बने।

इस कृति का पाठकों के सामने रखते हुए मुझे हर्ष हो रहा है। आशा है होनहार युवकवर्ग के उत्साह के अंकुर लहलहाने में इससे सक्रिय सहयोग मिलेगा।

विष्णुपुरी अलीगढ़।
मार्गशीर्ष शुक्ला ८, २००८ वि०

—गोकुलचन्द्र शर्मा

गांधी-गौरव

[पहला सर्ग]

१

गोपाल ! खोले कंस-कारागार के पट तम हटा,
व्रज की धरा पर गूँजती थी मधुर मुरली की छटा।
मिल ग्वाल-बालों में जगा जन-शक्ति साहस भर दिया,
फिर कंस अत्याचारियों का रच महाभारत किया।

२

विजयी हुए जो न्याय के पथ पर अटल होकर चले,
अन्याय के अनुयायियों के विकट दल भी कसमसे।
मोहन ! मिलाकर कर्मयोग हरा हमारे त्रास को
भय का हरण अब भी किया था भेष मोहनदास को।

३

पाठक ! पवित्र चरित्र ही सर्वत्र अनुकरणीय है
बलिदान सेवा सत्य पर संसार में स्वर्गीय है।
निःस्वार्थ देश-प्रेम से हो मलिनता मन की धुली
तो भूरिभोगी भूप से है पूज्यतर कर्मठ कुली।

४

राणा वहाँ के थे बड़े रणधीर निज व्रत के धनी
दीवान उत्तमचंद उनके कुशल, प्रभु-सेवक, गुनी।
पर, स्वाभिमान कभी न सेवा पर निछावर था किया
था करमचंद सुपुत्र ने भी तात का ही पथ लिया।

५

उनका स्वतंत्र स्वभाव भी प्रभु का न बंधा भक्त था
करना पड़ा इसके लिए यद्यपि नगर परित्यक्त था।
मितभाष धर्मपरायणा उनकी सुपत्नी पतिरता,
थी नित्यकर्म निबाहती सब नियमपूर्वक सुव्रता।

६

जननी हमारे चरितनायक की बड़ी जगवंद्य थी
आदर्श सबला आर्यभू की अमर कीर्ति अनिंद्य थी।
था सन अठारह सौ उनहत्तर द्वितीय अक्टोबर अहा!
ज्योतिर्मयी थी जन्मतिथि मोहन महात्मा की महा।

७

प्रमुदित प्रभाकर की कला थी विमल नभ में छा रही
सब भाँति शोभा शरद की थी प्रकृति को सरसा रही।
सुन्दर सलोने श्याम शिशु का हो रहा अवतार था,
जननी, जनक त्यों जन्मभू के कंठ का जो हार था।

२०

भ्राता सकल अनुकूल थे, माँ को मनाना काम था,
उनके विचारों में विदेश-प्रवास धर्म विरुद्ध था।
अड़चन बड़ी थी, पर निरंतर यत्न वह करते रहे,
नव भाव माँ के ज्ञान में भी नित्य ही भरते रहे।

२१

पड़ता प्रतिज्ञा का प्रभाव अवश्य है सर्वत्र ही,
दुर्गम्य सच्ची भावना को क्या कहीं कोई नहीं?
गांधी-चरित की चमकती यह गगन-गंगा निर्मला,
क्योंकर न माँ को उच्चपथ की दर्शिका होती भला!

२२

जब लक्ष्य ऊँचा था विचारों में प्रगति की धार थी,
तो बदलती धारा न क्यों माँ की विरुद्ध विचार की!
स्वीकार सुत की प्रार्थना ही अंत में करनी पड़ी,
करने सहाय सतृष्ण मन की हो गई जननी खड़ी।

२३

पर, प्रण कराया प्रथम मदिरा-मांस-महिला-त्याग का,
परिचय दिया इस भाँति सच्चा पुत्र के अनुराग का।
अब एक ही आपत्ति थी जो मार्ग में अवरोध थी,
चिंता न उसकी और गांधी को परंतु विरोध थी।

[तीसरा सर्ग]

१

जलयान था पश्चिम दिशा को सिंधु पर तरता चला,
था दृश्य वारिधि-वीचियों का हृदय को हरता चला।
मानस-पटल पर चित्र भावी का नया बनता चला,
संकल्प जीवन के परम उपयोग का ठनता चला।

२

गांधी सितम्बर सन् अठासी में पहुँच लन्दन गये,
देखे अनेक अपूर्व नूतन नगर के साधन नये।
थी वेष भूषा, भाव में सर्वत्र सारी भिन्नता,
होती प्रकट पहनाव से थी सभ्यता सम्पन्नता।

३

गांधी नये थे सहज ही उपहास के भाजन बने
आये यहाँ के रंग ढंग न समझ में उनकी घने।
गाने बजाने नाचने में निहित थी सब सभ्यता,
परिधान भोजन पान में थी इष्ट समझी भव्यता।

८

कैसे करें निर्वाह दोनों का कठिनतर कार्य था,
ऐसा अर्द्धांगलि एक को अब सर्वथा अनिवार्य था।
करके अनिच्छा प्रकट सीमा सभ्यता की तोड़ दी,
जग के दिखावे की प्रशंसा ही सदा को छोड़ दी।

९

'निर्लज्ज' 'निपट असभ्य' की पदवी प्रदत्त हुई सही
पर, थी वहाँ उपयुक्त बाधा-हरण की विधि भी वही।
उस मित्र-मंडल को प्रणाम किया वहीं कर जोड़ के,
हलके हुए मन सभ्यता के बन्धनों को तोड़ के।

१०

'सारल्य' जीवन ध्येय करके बन गये वे मितव्ययी,
स्वाध्याय-सेवन समय के उपयोग में रुचि बढ़ गयी।
अब प्रकृति परिवर्तित हुई सन्मित्र भी मिलने लगे,
सत्संग-सर में स्व सर्व प्रतिमा-कमल खिलने लगे।

११

बैरिस्टरी की कर परीक्षा पास सत्वर तीन म,
लौटे स्वदेश सहर्ष हो निष्णात नीति नवीन में।
उत्कंठ था हर दिव्य दर्शन के लिए उस मूर्ति के,
जिसने किये साधन सभी थे मनवांछित सुख-पूर्ति के।

[चौथा सर्ग]

१

मानव-समाज स्वभाव से ही संग प्रिय है सर्वदा,
एकत्र विश्व-विजातियों का मिलन है सुखमय सदा।
इस संमिलन का सृष्टि में जो श्रेष्ठतम आधार है,
वह सभ्य उन्नत जातियों का विश्व में व्यापार है।

२

यद्यपि जगत के मेल का सुमेल इसको प्राप्त है,
देखा अखिल भू-भाग पर अधिकार इसका व्याप्त है।
पर, स्वार्थ का शिशु जन्म इसके गर्भ से लेता कभी,
साधन सुदृढ़ साम्राज्य के भी शिथिल कर देता सभी।

३

होती घृणा आकर अहो ! विश्वास की प्रतिनिधि यहाँ,
संपत्ति-मद न शेष रहती नीति की विधि है कहाँ ?
परिणाम जो होता अनेक प्रमाण हैं इतिहास में,
पूरी झलक मिलती इसीकी भारतीय प्रवास में।

१६

थी पुत्र और कलत्र की चिन्ता इधर बाधक बड़ी,
कैसे करें हो दत्तचित्त स्वदेश की सेवा कड़ी?
अतएव लेने को उन्हें प्रस्थान घर को कर दिया,
ऐहिक सुखों पर त्याग-तुलसीपत्र ही तो धर दिया।

१७

आकर यहाँ वह मधुर उनकी मोहनी वंशी बजी,
सुनकर जिसे गिरिधारिणी गोपाल-गण-सेना सजी।
ले लकुट ही था नाम मघवा का किया मर्दन यथा,
आकर उन्होंने भी किया दुर्नीति का वर्जन तथा।

१८

स्वागत-समाजों में प्रवासी बंधुओं की दुख-कथा,
परवश्यता की देश भर को जा सुनाई थी कथा।
उस सूचना से एक गोरों का उबलने लग गया,
भीषण फणी आघात से हो क्रुद्ध मानो जग गया।

८

जब ट्रेन पर थे टिकट पहली क्लास का चढ़ने लगे
धक्का लगा, असबाब तजकर मालगाड़ी में भगे।
कानून की चलती कहाँ थी, रंग की जब बात थी
काले पुरुष कुछ भी कहें उसकी दया बस लात थी।

९

था होटलों में ठौर काला आदमी को कब कहाँ?
हा बैठने देता न ताँगा हाँकने वाला वहाँ।
पाती प्रतिष्ठा है कहीं भी जाति निर्बल, परवश
इसका परोक्ष प्रमाण भी था उस समय की दुर्दशा।

१०

मानव-जगत में बंधुओं को देख दुर्दशा दुखमयी
वज्र-प्रहार हुआ हृदय पर आत्मशक्ति हिल गयी।
सत्वर उन्होंने देश ही को लौटने की ठान ली,
दुर्दशा वहाँ पर कृष्ण-संतति की भली विध जान ली।

११

क्या-क्यों किया था एक वर्ष व्यतीत कंटक-जाल में,
होने लगा निष्ठुर नियम निर्मित वहाँ उस काल में।
तब भारतीय प्रवासियों का स्वत्व-हरण निहारते
गांधी न क्या रहकर वहाँ प्रतियोग उचित विचारते?

१६

थी पुत्र और कलत्र की चिन्ता इधर बाधक बड़ी,
कैसे करें हो इच्छित स्वदेश की सेवा कड़ी?
अतएव लेने को उन्हें प्रस्थान पर को कर दिया,
ऐहिक सुखों पर त्याग-तुलसीपत्र ही तो धर दिया।

१७

आकर यहाँ वह मधुर उनकी मोहनी वंशी बजी,
सुनकर जिसे गिरिधारिणी गोपाल-बाल-सेना सजी।
से [illegible] ही था मान मघवा का किया मर्दन यथा,
आकर उन्होंने भी किया दुर्नीति का वर्जन तथा।

१८

स्वागत-सभाओं में प्रवासी बंधुओं की दुख-कथा,
परवश्यता की देश भर को जा सुनाई थी व्यथा।
उस सूचना से एक गोरों का [illegible] लग गया,
भीषण फणी आघात से हो क्रुद्ध मानो जग गया।

•

४

घटना विकट थी, किंतु गांधी ने घृणा जानी नहीं,
बस 'प्रेम से जय' छोड़ गति थी दूसरी मानी नहीं।
वह द्वेष जल के बुलबुलों-सा आप ही क्षय हो चला,
कुछ काल में ही सत्प्रकृति का हर्षविधायक फल फला।

५

संयोग से संग्राम गोरों और बोरों में छिड़ा
था घोर-रण भीषण भयानक रूप धारण कर भिड़ा।
गांधी न चूके काम अवसर से उठाने में जरा,
सरकार की सेवार्थ ही रण-गमन-हित कर दी त्वरा।

६

करना विरोधी शासकों की विहित सेवा प्रीति से
था निपुण नेता ने सुझाया बंधुओं को रीति से।
आहत-सहायक-दल बना वे वीर भारत के चले,
जाकर रण-स्थल में दिखाये कृत्य सेवा के भले।

७

वे घायलों को अग्नि-पथ से लादकर साथ उठा,
डेरा कोसों दूरी पर स्थित थे कष्ट से देते छुटा।
उस काल उनके शीश पर पड़ते श्रमोद्भुत जल थे,
मानो सुरों के ही करों से दिव्य झरते फूल थे।

[छठा सर्ग]

१

आपत्ति में उच्छिन्न होता सामयिक विद्वेष है
पर, आंतरिक अनुराग क्या रहता वहाँ कुछ शेष है ?
क्या कुटिल पाकर सिद्धि सत्य-विचार रखते हैं कहीं ?
पय-पान कर क्या सर्प कर प्रहार करते हैं नहीं ?

संकट टले पर विजय का बढ़ता विरोध ममत्व है
बहता महामद-मद-प्रवाहों में सुनीति-समत्व है।
यद्यपि बना था ट्रांसवाल, प्रबल गोरे राज्य का
अंग था समर में था बड़ा वैभव ब्रिटिश-साम्राज्य का।

३

था युद्ध का कारण प्रजा के साथ दुर्व्यवहार ही
अतएव अवलम्बित विजय पर लाभ की आशा रही।
पर भी स्वराज्य वह दुराग्रह में विपरिवर्तित हुई,
शिरमौरता फिर गोरता की भी यहाँ दर्शित हुई।

८

वैफल्य से भयभीत होना वीर को भाता नहीं,
रखता निराशा-नाम से वह भूल भी नाता नहीं।
अब ये प्रवासी पाँव पर अपने खड़े होने लगे,
निज स्वत्व-रक्षा-बीज वे मन-भूमि में बोने लगे।

९

गांधी वकालत के लिए प्रीटोरिया में जम गये,
दक्षिण-मही में जागरण के ये जुटे साधन नये।
था 'इंडियन ओपीनियन' निकला निराली ले ध्वजा
जो भारतीय समाज के राष्ट्रीय भावों से भरा।

१०

दुर्भाग्य से अब प्लेग प्रबला प्रकट भूरि भयंकरी,
जो बन गई पीड़ित-प्रवासी-बंधु-शोक-प्रसंकरी।
सरकार का शैथिल्य लख गांधी उपस्थित थे वहाँ,
दुख देख दीनों के रहे चुप लोक-सेवक कब कहाँ?

११

संताप में संलग्न जीवन की कथा कहते हुए,
श्रम-स्वेद-सरिता की प्रबलतर धार में बहते हुए।
हमने न डाली दृष्टि उन के रम्य रसों पर कहीं,
जिनकी हमारे चरित-नायक में कमी भी त्रुटि नहीं।

१६

कोमल करों से सुमन, कर्पूर आदि में ममशीलता,
स्वर्गीय सुख अनुभव कराती थी नसों की नीलता।
श्रम-सीकरों से स्नात होकर स्वच्छ होता हृदय था
उस प्रेम प्रांगण में हुआ आत्मीय गौरव उदय था।

१७

अभ्यास गांधी ने किया निज श्रम तप का था यहीं,
पाया सुभग संयोग संयमशील जप का था यहीं।
आमोद और प्रमोद को भी था प्रणाम किया यहीं,
अद्भुत अलौकिक त्याग का भी व्रत ललाम किया यहीं।

१८

उस तेजपुंज तपोधनी को अन्न न लोभन भक्ति थे
हर्षोक सभी अवलोक दिनचर्या चमत्कृत, चकित थे।
बस, खुरदरा कम्बल सुखे नभ में शयन का बसन था
रक्ताभ क्षीण शरीर की अत्यल्प होता अशन था।

१९

मौन्य मगन मृदुलांग को करता विलक्षण कांत था,
कृश था कलेवर, किन्तु मन निर्मल निरन्तर शांत था।
उस क्षीणता में क्षीण था स्वर्गीय आत्मिक बल कहाँ,
फिर अन्धकार कहाँ यहाँ समुदित प्रभाकर हो जहाँ।

२४

अतएव नूतन नियम-रचना से निबन्धित थे कुली,
कुप्रथाओं की क्रूरता थी पूर्णतः जिसमें खुली।
पदवी 'कुली' की भी कुलीनों को प्रथम दे दी गई,
भी रँगतियों की छापवाली सूचिका प्रस्तुत गई।

२५

कैसे कहें सुन्दर तनों में मन-मलिनता थी भरी
थी क्रूरता की मूल भूरी सभ्यता में भी हरी।
पोती गई गौरांग शिर पर कुरूपता की कालिमा,
काले कलेजों को छिपाये थी मुखों की लालिमा।

२६

भगवान्! भेड़ों को भिड़ाते भेड़ियों से हो तुम्हीं
परमेश! पतितों को उठाते प्रेम-पथ से हो तुम्हीं।
क्या सच कहो तुम ही कराते दीन पर अन्याय हो?
लीला दिखाने को तुम्हीं देते भला दुखदाय हो?

२७

आरम्भ औ परिणाम का रचते तुम्हीं नटवर! न क्या?
मत-भाव-भय तुमने भराये थे कहो घर घर न क्या?
क्या वर्ण का वैभिन्न्य तुमने ही सुझाया था कहो?
पर, किस तरह मानें मुरार! बात यह अनुचित अहो?

[illegible]

तुम तो स्वयं ही स्वतन्त्र बन जाते यहाँ
जीने न क्या जाते कहीं से संग के साथ
वे एक दम की स्वतन्त्र अभिलाषा की
दावत तुम्हें कभी थी स्वाधीनता हम

[सातवाँ सर्ग]

१

जिस जेल में जन्मे महात्मा कृष्ण हरने को व्यथा,
वे लेखनी लिखनी तुम्हें है आज उसकी ही कथा।
तेरे लिए इसमें न कुछ भी झिझकने का काम है,
कर्मण्य वीरों को यही विश्राम-धाम ललाम है।

२

उस काल फाटक में फंसे कितने जगत के लाल हैं?
अनुभव यहाँ होते कहो कितने विचित्र विशाल हैं!
जिसमें दुखों के साथ ही होता सुखों का मेल है
शिक्षा-सदन स्वत्वाग्नि-साधन सिद्धि-जीवन जेल है।

३

देशानुरागी के चरण जिस भूमि पर हा पड़ गये,
मम-कथा सपूतों के जहाँ कुछ काल भी हों कट गये।
स्वर्ग-स्पर्धी-सी शुभ्र-भू वह पुण्य-पथ-विस्तारिणी,
जातीयता का तीर्थ है नव जाति की निस्तारिणी।

८

इस भारतीयों का हुआ पक्का समक्ष रोकने,
था आत्म-निर्णय का लिया सब शास्त्र उनके शोक ने।
उत्साह के आवेग से प्रत्येक व्यक्ति सजीव था,
नव नियम-खंडन के लिए आवेश उग्र अतीव था।

९

था सारगर्भित भाषणों से मीति-भाव भगा दिया,
आत्मावलंबन पर अभय हो प्राण-दाम लगा दिया।
सर्वत्र सत्याग्रह सभी ने पूर्ण प्रतिपादित किया,
तज दीनता को सहज साहस का नया परिचय दिया।

१०

निज भाग्य के थे ही स्वयं अब निपुण निर्माता हुए
पाकर कसौटी कष्ट की वे दीप्ति के दाता हुए।
भाषा, स्मट्स जनरल तथा कौंसिल नियम-निर्धारिणी,
थी अब न उनके जन्म-स्वत्वों के सुखों की हारिणी।

११

कमिटी बनी दर्मों दलों ने मेल पर मत भी दिये
तो भी न थी सुलझी समस्या यत्न यद्यपि बहु किये।
सम्राट की स्वीकृति सहित था नियम बन ही तो गया,
सत्याग्रही-संग्राम का आरम्भ ठन ही तो गया।

१६

ये एक जन की भाँति सब प्रस्तुत प्रतिज्ञा-हित हुए,
निज नाम देने पर किसी विध भी न ये सहमत हुए।
आती स्वयं यदि मृत्यु भी तो ये न भय खाते कभी,
कहना भला क्या दंड, कारागार की फिर बात भी।

१७

सूची बनाता ही फिरा अधिकारियों का दल यहाँ,
पर, था प्रवासी-वर्ग अपनी शपथ पर अविचल यहाँ।
अन्तःकरण साथी बनाया ताप सहने के लिए,
कटिबद्ध थे वे जेल में आजन्म रहने के लिए।

१८

जब जेल खेल-समान बने, सरकार की आँखें खुलीं,
थीं सत्य-दृढ़ता से समर की हठभरी बातें घुलीं।
फिर संधि अस्थायी हुई संशोधनों के द्वार से,
इच्छानुसार हुआ लिखाना नाम का सरकार से।

१९

लम्बे दिवस को बंद था अतएव सत्याग्रह किया,
मोहन महात्मा ने स्वयं निज नाम देने कह दिया।
वे चाहते थे शांति से ही लक्ष्य की संप्राप्ति हो,
हितघातिनी पारस्परिक विद्वेष-बुद्धि समाप्त हो।

२४

वे मानते थे दोष उसका था न तनिक पठान का,
आया उसे आवेश था निज देश के अभिमान का।
मोहन जिसे सच मानता है मूढ़ मोहन के लिये
हैं प्रकृति ने ही भिन्न भिन्न विचार जन-जन के लिये।

२५

न समझते थे पुरुष पाना दंड अपने बंधु से,
किस भाँति होती क्रूरता कर दो दया के सिंधु से?
उनकी समझ में देह पर प्रिय बंधु का भी स्वत्व था,
निज अंग पर भी धन्य! गांधी को न पूर्ण ममत्व था।

२६

इसके अनंतर जेल में बीते जिन्हें दो मास थे,
था मूत्र, विष्ठा तक उठाना, अन्य भीषण त्रास थे।
आवास काली कोठरी में हब्शियों का संग था
दुर्गन्ध-पूरित वायु थी बस गंदगी का रंग था।

२७

यह जेल ही पर, विश्व विद्यालय गिरा का धाम था
देता निरीक्षण-पाठ द्वारा सीख सरल ललाम था।
हित का प्रबंध करा सिपाही सब रहे थे सत्य के,
साधन किये थे जेल से निज जाल में सत्कृत्य के।

५२

आईं सहस्रों पर पुनः गंभीरतर आपत्तियाँ,
निर्दोष दीनों से भरीं बंदी-भवन की भित्तियाँ।
जब चौगुने उत्साह से संग्राम सत्याग्रह चला
बनता न कारागार क्यों फिर पूर्ण पीड़ागृह भला?

५३

वे नाश और विपत्ति के परिवार पर पाले पड़े,
शिशु-बाल-पतिता-पुञ्ज से वे हृदय पर छाले पड़े।
पा कष्ट कल्पनातीत अबला धैर्य ही धरती रहीं,
पति पुत्र, प्यारे बन्धुओं में शौर्य ही भरती रहीं।

५४

ज्यों-ज्यों तपाये अंग त्यों-त्यों सार-सम दृढ़तर हुए,
ज्यों-ज्यों लगाये बाँध, वे जलधार-सम प्रमतर हुए।
कठिनाइयों की ठक्करों ने सुगमता का पथ दिया,
परिताप-पर्वत को दिया था पुण्यवत् रचना सिला।

५५

जिस भाँति कैद कड़ी मिली थी काम था करना कड़ा,
पाला प्रथम दिन ही उन्हें मिट्टी-खुदाई से पड़ा।
बरसा रही थी धूप भी अंगार-ज्वाला घोर ही,
थी पार्डर की मनवृत्ति भी अशुभ और कठोर ही।

४८

हँसता हुआ वह श्याम मुख फिर भी रुलाता है हमें,
है राष्ट्र-रूप का मर्म क्या देखो सिखाता है हमें।
दो बूँद आँसू ही गिराकर पाठको ! तुम खोल लो,
इस शूर शिरसा बंध की गंभीरता को तोल लो।

४९

करती प्रकृति रक्षा सदा है निरपराध मनुष्य की,
संस्थिति कठिन में रक्षिका रहती सदैव भविष्य की।
सुख-दुख का अनुभव सदा रहता स्वभावाधीन है,
पड़ पंक में जीता पतंगों पर न मरता मीन है।

•

४०

यों हो विचार विमग्न मृदु मुसकान मुख पर आ गई
थी उचितता निज उक्ति की उनको सभी विध भा गई।
कहने लगे, जिस दुःख में सुख हो न उसका रंज है,
क्या पंक में लिपटा हुआ कुछ कष्ट पाता कंज है?

४१

मूर्छा नहीं, यदि मृत्यु भी आ जाय तो फिरना नहीं,
इस दुःख से बच, दास-बंधन में हमें गिरना नहीं।
आश्वस्त यों इस विध किया उस बंधु को अति प्रीति से,
पर वे दुखी थे कुछ जनों के भ्रम की अनरीति से।

४२

ये कामचोर अनेक करते हीन से सब काम थे
सत्याग्रही के नाम को यों कर रहे बदनाम थे।
जितना सरल है मार्ग यह उतना अरक्षित भी यही,
करता गगन म गमन है सर्वत्र ही सत्याग्रही।

४३

होता न उसका वैर शासक व्यक्ति से है तनिक भी,
है इष्ट उसको मूल-संरोपम मिटा दूषण सभी।
कर्त्तव्य गिन उसको अतः सब काम करना चाहिए
हठ में मिलाकर सत्य को अन्याय हरना चाहिए।

४८

रखता हुआ वह श्याम मुख फिर भी रुलाता है हमें,
है राष्ट्र-रुप का मर्म क्या देखो दिखाता है हमें।
दो बूँद आँसू ही गिराकर पाठको ! दृग खोल लो,
इस शूर शिरसा बंध की गंभीरता को तोल लो।

४९

करती प्रकृति रक्षा सदा है निरपराध मनुष्य की,
संस्थिति कठिन में रश्मि रहती सदैव भविष्य की।
सुख-दुख का अनुभव सदा रहता स्वभावाधीन है,
पर पंक में जीता पतंगों पर न बचता मीन है।

●

४

मिक्षा द्रव्य को अस जाना है नरक से भी बुरा,
भूखों मरें खाना बुरा, फिर वस्त्र मोटा खुरदरा।
पर, मान पर मरना महागम भाग्यसूचक मानते,
निज देश के हित सब धार्मिक, खेल को हैं जानते।

५

है मंगलसूत्र भी यही, बंदी बनाता जो उन्हें,
भगवद्भजन के समय भी है सहज मिल जाता उन्हें।
सारे व्यसन हैं छूटते, व्यायाम होता श्रम से,
श्रम-भीत होकर हैं सभी सोते सदा आराम से।

६

मन का दमन कर देश-हित संकट सहना सब करें,
जो खेत जायेंगे उठायेंगे उन्हें जो गिर पड़े।
यह लो लगायेंगे कि सुख के धाम हों जिससे खड़े,
हाँ हाँ लगायेंगे नगर हों भव्य भी आकर भले।

७

त्रय मास की थी कैद उनको दी गई फिर भी कड़ी,
मानी उन्होंने हर्षपूर्वक यह बड़ी ही शुभ घड़ी।
वे अनुभवी अब हो चुके, सोचा भाई क्या बात है,
मिलता वहाँ पर ज्ञान जो सब हो चुका ही ज्ञात है।

१२

था यूनियन सरकार का निर्णय भरा अंधेर से,
वे भारतीय विवाह सब विच्छिन्न उसके फेर से।
कब सह सकीं भारत-सुतायें भ्रष्ट धर्माघात को,
अबला सही, पर प्राण दे रक्खा कुलों की बात को।

१३

वे शर्तबंद कुली यहाँ जो काम पर थे जब रहे,
जातीय रण में रोषपूर्वक त्याग भय वे बढ़ रहे।
जो रमणियाँ उत्साह ही देती रहीं थीं दूर से,
वे आ डटीं अब क्षेत्र में जातीय बल भरपूर से।

१४

थीं कूदती इस भाँति से वे प्रज्वलित समराग्नि में
पड़ते सुधा-सीकर यथा हों गर्वित बड़वाग्नि में।
सर्वस्व स्वाहा कर न वे भरतीं जरा भी आह थीं,
आदर्श बन नर-वृन्द को देतीं उमंग अथाह थीं।

१५

कुलभूषणा कितनी अहो वे क्षेत्र पावन कर रहीं?
किस भाँति मिलकर शक्ति से थीं भक्ति भाजन बन रहीं?
मिल जननियों, वधुओं, भगिनियों का पराक्रम देख लो,
अन्याय से दबकर उठा साहस-समीरण देख लो।

२०

क्या कायरों की भाँति कर भागें स्वदेश स्वयं हमीं ?
या दूर से देखें कुलिश-अनून-वेश स्वयं हमीं।
होगा विदीर्ण न क्या कहो उर बंधु-वधाघात से ?
अथवा कठिन पाषाण भी तो प्रबल वारि-प्रपात से।

२१

अस्वस्थ हो तुम जेल में किस भाँति जाओगी कहो ?
क्या कष्ट की औषधि यहाँ गुरु कष्ट पाओगी कहो ?"
बहु भाँति समझाया मगर हठ मान ही लेनी पड़ी,
आज्ञा न सीता को कहो, क्या राम को देनी पड़ी ?

२२

नेतृत्व में इस वीर नेत्री के हुए जो कृत्य हैं,
कर कल्पना यह मुग्ध शूर-मयूर करते नृत्य हैं।
पर्दों प्रियों का वह पदार्पण समर-प्रांगण में अहो !
देखा न देश-प्रेम की सुस्फूर्ति किस रूप में कहो ?

२३

गोदी-भरे बच्चों सहित वे वीर ललनाएँ चलीं,
जिनका रही कुल गर्भ में अर्भक बनाएँ ही भली।
कुल कन्यकाएँ कंज-सी कोमल दया-द्रुम की कली
थी सत्य-संगर में मिलीं, जो प्रेम से प्रतिदिन पली।

२८

जाते कभी वे पार करने ट्रांसवाल प्रदेश को,
दक्षिण कभी उत्तर कभी, लेकर सुभग उद्देश्य को।
शिशु एक महिला का मरा तो वचन इतना ही कहा,
"मृत को तजो, जीवित जनों का काम करना है महा।"

२९

अवलोक यह प्रतिपक्षियों का रंग फीका पड़ गया,
दुष्कर तपस्या से प्रबल पशु-गर्व का बल मढ़ गया।
वे कुछ नियम अनुकूल रखकर भाव ही भरने पड़े,
हो गलितगर्व विपक्षियों को शीष नत करने पड़े।

३०

है गेय 'हरबतसिंह' के अनुराग की प्यारी कथा
सत्पथ के संकल्प को जो जन्म देती सर्वथा।
यह सिख पचहत्तर बरस का जेल में पहुँचा जभी,
'क्यों आ गये तुम वृद्ध ?' था यह प्रश्न गांधी का तभी।

३१

उत्तर दिया "है बात क्या, क्या जानता इतना नहीं ?
भाइ ! तुम्हें कर तीन-पौंडी है कभी देना नहीं।
पर, भोगते हो भाइयों के हित कड़ी यह यातना।
क्या वृद्ध होता को तरह मैं मूर्ख ही रहता बना ?

३६

इससे न माँ रोदन तुम्हारा अब अधिक जाता सहा,
देवी ! धरो धीरज, विचारो बात है कैसी महा।
हो निहत अत्याचारियों से, पति तुम्हारे मोद से,
देखो, दिखाते हैं प्रभा परमेश की प्रिय गोद से।

३७

दे देह का बलिदान प्यारे देश पर वे अमर हैं,
पड़कर पलंगों पर न होते प्राप्त वे पद प्रवर हैं।
लोकत्रयी का ताज वह निज राष्ट्र का राकेश है,
जिसके मरण से कीर्ति करता प्राप्त प्यारा देश है।

३८

मारत-मही उद्धार पावेगी न माता सहज ही
शतश: सुताएँ देश की अन्याय देखेंगी यहीं।
यह शीष अर्पित है हमारा हिंदमाता के लिये
देखे जगत अन्यायियों से लड़ मरा इसके लिये,

३९

पत्नी बने मेरी तुम्हारे सदृश ही विधवा दुखी,
मुझको मिलेगी शांति जब निज देश को देखूँ सुखी।'
करके प्रणाम बिदा हुए वे वीर रमणी से वहाँ,
अनुमान करना कठिन है उस दृश्य अद्भुत का यहाँ।

[नवाँ सर्ग]

१

बहती जहाँ पर पुण्यतोया जाह्नवी जगपावनी,
हिम-हार-धर-भूधर विभूषित भव्य भू मनभावनी।
पावन पयोधि, प्रसन्न नभ, घन विपुल उपवन-धारिणी,
शोभित हमारी मातृभूमि मनोज्ञ है भवतारिणी।

२

जो हों सुखी न स्वदेश में क्या शेष उनका ह्रास है?
रहते पतन के साथ हों इससे अधिक क्या त्रास है?
पर-देश में पशु-तुल्य उनसे यदि हुआ व्यवहार है,
आश्चर्य क्या इसमें न कोई बंधु-वर्ग विचार है।

३

जब तक न रस पाती किसी सूखे विटप की मूल है
फल, फूल से फूला उसे अवलोकना अति भूल है।
हैं परमुखापेक्षी प्रशंसापात्र हो सकते नहीं,
घर में दुःखित किस भाँति सुंदर गात्र हो सकते कहीं?

८

बलवान अपना देश हो तो है समादर सब कहीं,
है दीन, दुर्बल राष्ट्र को मिलता प्रवेश कहीं नहीं।
इस हेतु कर स्वदेश को ही शक्ति-संचय का क्रिया
संगठन बिखरी शक्ति करने का महाव्रत ले लिया।

९

भारत वर्ष के ज्ञान-हित जब वे भ्रमण करने लगे,
दुख दीन, हीनों के निरख उच्छ्वास में भरने लगे।
बस तीसरा दर्जा चुना निज रेल-यात्रा के लिए,
था मार्ग ही यह जानने का दुःख-मात्रा के लिए।

१०

नर-चरित होता सुगमतम भी क्षय में अंकित कहो!
पपख-प्रभा होती न क्या लघु बिंदु में बिंबित कहो?
करती पतित पूर्णांग को लघु अंग की भी हानि है,
होगा महान न, व्यर्थ से करता रहा जो ग्लानि है।

११

देखा न जिसने ग्लानि-भरा पीड़ित पुरुष की ओर है
उस क्रूर पत्थर का हृदय क्या कुलिश से न कठोर है?
पाठक! घृणा के हेतु जिसके जन्म जन ही अधिक हैं,
करते तिरस्कृत बंधु को जो, बंधु हैं या बधिक हैं?

१६

उसके समीप सुहा रहा सरकार का भी जेल है,
मोहन मराल बिलगा रहा पय का सलिल से मेल है।
संसार का कल्याण-चिंतक, देश की जाग्रत कला ,
सर्वत्र सत्योपासना में मग्न, मुनिकुल में पला।

१७

कारुण्य की प्रतिमा, दया का दिव्य वह अवतार है,
है एक वाग्मीवर, सदा ही निष्कपट व्यवहार है।
जो जाति-भेद न मानता है, भारतीय विशुद्ध है,
कामी न क्रोधी है तथा मद-लोभ-मोह विरुद्ध है।

१८

प्राचीन आर्यों की झलक उसके चरित्र की भूति है,
जिसमें असत्य-घृणा भरी होती न द्वेष-प्रसूति है।
सत्याग्रहाश्रम है यही शुभ, सरलता का केन्द्र है,
समभाव से रहता यहाँ पर दस्यु और द्विजेन्द्र है।

१६

रहते इसी में देश-हित त्यागी, तपस्वी वीर हैं,
हैं जो अहिंसा से सुसज्जित सत्य-व्रत में धीर हैं।
गिरती उदय-गिरि से धरा पर रश्मियाँ रवि की यथा
गांधी-विचार विकीर्ण हैं इस धाम से होते तथा।

२४

मोहन महा चिंतित हुए यों देख फूट पड़ी यहाँ,
कल्याण पड़ पारस्परिक कलहाग्नि में, मिलता कहाँ ?
वे सुमति लाने के लिए कहते फिरे प्रत्येक से,
सर्वत्र रहते दूर ही विद्वेष से अविवेक से।

२५

वे लखनऊ कांग्रेस में हिन्दू, मुसलमाँ मिल गये,
उस समय गाँधी के हृदय में फूल मानो खिल गये।
इस मेल के हित था सभी ने 'तिलक' का गर्जन सुना
करना किसी भी मूल्य पर था फूट का वर्जन सुना।

२६

पर, राष्ट्रभाषा में कथन आरंभ गाँधी ने किया,
चारों दिशा से तब सुनाई राष्ट्र-भाषा-स्वर दिया।
"राष्ट्रीय सम्मेलन हरे ! भाषा पराये देश की,
होगी अधिक इससे कहो क्या बात कोई क्लेश की ?"

२७

हो अति दुखी इससे उन्होंने खेद-मिश्रित क्रोध से,
सबसे कहा "सीखो स्वभाषा काम लो कुछ बोध से।"
यों कह कथन को अर्थ में तत्काल परिणत कर दिया
आभार हिंदी ही हृदय के भाव का प्रकटित किया।

३२

ऐसी गई थी द्रोण ही के तुल्य ब्राह्मण-वीरता,
कम थी न कुछ भी कुशलता त्यों मुसलमानी धीरता।
था भारतीयों का रुधिर पानी बना पर-त्राण को,
आकर हमीं ने तो बचाया फ्रांस-भू के प्राण को।

३३

थे अग्रसर गांधी स्वयं रंगरूट-संग्रह को हुए,
जिससे सहस्रों वीर उद्यत शत्रु-निग्रह को हुए।
संकट-समय में वे विपक्षी को दबाते थे नहीं,
वे लाभ शत्रु-विपन्नता से कुछ उठाते थे नहीं।

३४

गांधी-गिरा जादू-भरी थी काम कर जाती बड़ा
अविराम श्रम करते हुए देखा सदा उनको खड़ा।
वे मधुर वाणी से यहाँ देते उन्हें जो मन्त्र थे,
वे ही स्वराज्य-प्राप्ति के, साधन सरल, नय-यंत्र थे—

३५

रण-पाठ पढ़कर भारतीय सुभट जब हो जायँगे
दुर्जेय शत्रुओं का न भय निज चित्त में तब लायँगे।
निःस्वार्थ सेवा कर अनूठा भक्ति का दिखलायँगे
फिर शक्ति किसकी है स्वराज्य न जो यहाँ हम पायँगे।

४०

गांधी उपाय विचारने बैठे प्रबल प्रत्यूह का,
भेदक न सत्याग्रह बिना पाया विकट दुर्व्यूह का।
'प्रत्येक आत्मा देश की मिल जाय केवल युक्ति थी,
'प्रत्यंग भारतवर्ष का हिल जाय,' तो बस मुक्ति थी।

४१

'इस राक्षसी रौलट-दिवस के शोक में सर्वत्र ही
प्रतिरोध-सूचक व्रत करे निःशेष भारत की मही।
परमेश के प्रति प्रार्थना की ध्वनि उठे आकाश में
आलोक नव आ जाय आर्यावर्त-हृदय हताश में।

४२

'करके विरोध सभा सभी अपनी अनिच्छा दें दिखा,
इतिहास में जनतापमान-महान-प्रतिपक्ष दें लिखा।'
कर बार-बार विचार इसको रूप निर्णय का दिया
यह सामने फिर सामना दुर्धर्ष दुर्नय का किया।

४३

दुस्तर परीक्षा का समय था तरुण भारत के लिये
अनुचित अनादर ने प्रसूत प्रकोप के अंकुर किये।
निश्चित हुई अप्रिल छठी तिथि शोक-सूचक दिवस की,
सर्वत्र छायी गूँज गांधी-दिव्य-वाणी सरस की।

४८

क्यों तीस कोटि शरीर पर-संकेत पर ही नाचते ?
कब तक न अपनी भाग्य-परिवर्तन-कथा को बाँचते ?
कठपुतलियों का नृत्य-सूत्र न क्या कभी है टूटता ?
भारी भयों से भेंटकर, भय भीरु का भी छूटता ?

४९

दुर्दमन ही उद्गमन का उपक्रम करता वीर है,
रुक जाय राष्ट्रोत्थान बल-भय से न ऐसी चीज है।
मूर्छा तभी तक मेष है, जग जाय तो नर शेर है
होती न जागृत राष्ट्र के उत्थान में कुछ देर है।

५०

है शक्ति सत्याग्रह अमोघ, अजेय है अविवाद है,
इस विश्व में विश्रुत रहा इसका महा जयनाद है।
श्रीराम है ध्रुव है, यही निर्भय हठी प्रह्लाद है,
सुख शांति और स्वतंत्रता, सब सत्य-शक्ति-प्रसाद है।

१२

संयोग से कांग्रेस-अधिवेशन अमृतसर में हुआ,
जिसमें उखड़ने के लिए ही दासता का था जुआ।
जन शक्ति की नवजीवनी उसमें दिखाई दी यहाँ,
थी असहयोग विचार की चर्चा छिड़ी पहले जहाँ।

१३

मैदान में फिर कूदकर कांग्रेस समताशालिनी,
थी नागपुर में बन गई, वह कर्म-बल की पालिनी।
सिद्धांत गांधी का यहाँ संपूर्ण था अपना लिया,
नूतन बहिष्कारीयता का शस्त्र जनता को दिया।

१४

"सरकार को सहयोग शासन में, न शोषण में मिले,
हो पंगु बिना सहायक के, आसन सुदृढ़ उसका हिले।
मिल आर्य हिन्दू और मुस्लिम एकता का साज हो
दुर्भावना ही छूत की मिट जाय, अपना राज हो।"

१५

इस रूप के अनुरूप ही बदला विधान तुरंत था
थी स्वर्ग की समता प्रथम पक्षपात-बल का अंत था।
था त्याग का ही मूल्य अब, क्या कल्पना का काम था?
आता नवीन प्रयोग में क्या झिझकने का नाम था?

१२

संयोग से कांग्रेस-अधिवेशन अमृतसर में हुआ,
जिसमें उबरने के लिए दो दासता का था जुआ।
नव शक्ति की नवजीवनी उसमें दिखाई दी वहाँ,
थी असहयोग विचार की चर्चा छिड़ी पहले जहाँ।

१३

मैदान में फिर कूदकर कांग्रेस समताप्रकाशिनी,
थी नागपुर में जम गई, वह धर्म-पथ की पालिनी।
सिद्धांत गांधी का वहाँ संपूर्ण था अपना लिया,
नूतन बहिष्कारीयता का शस्त्र जनता को दिया।

१४

"सरकार को सहयोग शासन में, न शोषण में मिले,
हो पंगु बिना सहायता के, शासन सुदृढ़ उसका हिले।
मिल जायें हिन्दू और मुस्लिम एकता का साज हो
दुर्भावना ही मूल की मिट जाय, अपना राज हो।"

१५

इस रूप के अनुरूप ही चरखा विधान तुरंत था
थी कार्य की क्षमता प्रथम, परतन्त्र-बल का अंत था।
था त्याग का ही मूल्य अब, क्या कल्पना का काम था?
आता नवीन प्रयोग में कब झिझकने का नाम था?

४

हिंसा बिना था असहयोग अमंद गति से चल रहा,
शासक दबाने में उसे था विवश हो दुर्बल रहा।
इस वर्ष तीस सहस्र जन नेतादि जेलों में गये,
गांधी बताते कार्य का निर्देश दे-देकर नये।

५

पर, यह आंदोलन हुआ, आश्चर्य से सब चकित थे,
आदेश गांधी का स्वयं था सुन सभी जन थकित थे।
थी आग थाने में लगाई भीड़ भड़की एक ने,
जिसमें जलाये कुछ सिपाही ग्राम के अविवेक ने।

६

यह कांड 'चौरीचौरा'[1] में सरकार के अनुकूल था,
उसके दमन का हेतु था, यह क्योंकि हिंसा-मूल था।
सब को निराशा भी हुई, कुछ क्षाम थे, कुछ क्रुद्ध थे।
जो जेल में थे वे सभी इसके नितांत विरुद्ध थे।

७

गांधी अकेले ने अहिंसा-मर्म को देखा यहां,
यह कार्य कायरता-भरा ही एक था खेला यहाँ।
हिंसा अगर हो संगठन का अंग, तो है विफलता,
परिणाम इसका है पराजय-पूर्ण ही तो निष्फलता।

[1] चौरीचौरा ग्राम

१२

इसके सिवा रहती दरिद्रों की दशा भी दृष्टि में,
इससे सदा ही आप नारायण दुखों की सृष्टि में।
इस भाँति लोगों को सिखाते ग्राम, अनुशासन फिरे,
इनकी सफाई में, लगन में वे भरे गुण ही निरे।

१३

धनवान के धन को गरीबों की धरोहर मानते,
अर्पण करना उन्हीं को, धर्म ये वे जानते।
उद्योग-धन्धों में लगें वे भावना थी भव्य ही,
उनके लिए यथेष्ट था बस बाँट देना द्रव्य ही।

१४

था जनवरी छब्बीस को सन तीस में जो मना लिया
स्वातंत्र्य-दिन-उत्सव मना मानों नया ही रंग लिया।
जिस शांति से, जिस सौम्यता से जाग जनता उठ पड़ी,
थी देश के कल्याण की वह एक अद्भुत ही घड़ी।

१५

रख हाथ नाड़ी पर परख ली चतुर गांधी ने व्यथा,
बस, काम करने का समय उपयुक्त समझा सर्वथा।
सविनय अवज्ञा के लिए उनकी पुकार उठी तभी,
सन्नद्ध थे, बस हो गये आह्वान पर उनके सभी।

२०

आरंभ था भय-भंग का अप्रैल छः की तिथि वही,
जिस दिवस थी रंजित हुई जलियानवाला की मही।
फिर देश भर को दी गई अनुमति नियम के भंग की,
सर्वत्र छायी थी छटा मानो वसंती रंग की।

२१

क्या ग्राम में, क्या नगर में चर्चा नमक की थी छिड़ी
विघुत्प्रहर से लहरते थे, क्या महल, क्या झोंपड़ी।
बाँधे उठाकर मृत्तिका से वीर मानों गढ़ रहे
गांधी विजय की ओर थे निर्बाध गति से बढ़ रहे।

२२

इस बीच मानों संधि की भी बातें इरविन से हुईं
साम्राज्य मे समझ मानों सेवा की कालिका हुई।
मस्तक ऊँचे बन दिनों थे दिव्य गांधी के बड़े,
ऐसे पुरुष थे चक्रमेश्वरी के प्रयाग संमुख खड़े।

२३

वे भक्ति, सेवा शक्ति से होकर प्रभावित थे सिख
कांग्रेस-सेवा-सुमन थे सौरभ भरे मानों खिले।
इस सफलता की गंध पर ये भृंग मँडराने लगे,
जो थे समुद्र स्वयं सभी कांग्रेस-गुण गाने लगे।

[बारहवाँ सर्ग]

१

लीगिर समझौता हुआ, पर सब नहीं संतुष्ट थे,
निर्णय निभाने के लिए, हाँ कार्य-तत्पर, पुष्ट थे।
गांधी समस्या थे स्वयं जो दूर की थे सोचते,
थी तर्क पर तुलती न वह, पर भिन्न थे वे मोचते।

२

वे राजनीतिक क्षेत्र को रखते अछूता थे नहीं,
वे संप्रदाय समाज के भी प्रश्न को लाते वहीं।
बत्तीस सन् में जब कि वे थे यरवदा के जेल में,
सरकार ने की फोड़ हिंदू-जाति के ही मेल में।

३

दे पृथक् निर्वाचन अलग था दलित वर्ग बना दिया
बस, आमरण-अनशन-विचार तुरत गांधी ने किया।
थी सनसनी फैली, हुआ विस्फोट-सा सर्वत्र था
भारी भयंकर ही महात्मा ने रचा नव सत्र था।

४

राष्ट्रीय आंदोलन क्यों पर मृत्यु का निश्चय क्यों!
संघर्ष-आयोजन क्यों उपवास पर निर्णय क्यों!
आई समझ में बात उनके भी न, जो थे साथ न,
जादू-भरा डंडा लिये बापू खड़े थे हाथ में।

५

यह खबर दौड़ाई कि हिंदू हृदय ही था हिल गया,
अस्पृश्यता के अंत का आधार ही था मिल गया।
पर मुस्कराता था यहाँ, वे पत्र लिख जाते यहाँ,
सिरसमरे सब सोचते थे, "दिल रही डोरी कहाँ?"

६

था पैक्ट पूना में हुआ, उपवास का भी भंग था,
जो प्रगति फैली देश में उसका अनूठा रंग था।
अब हरिजनों के हेतु आंदोलन चला था किंम ही,
संघर्ष की गति में यही अब एक बाधा हो रही।

७

हिंदुत्व के मुख से कलंक बिना धुले संघर्ष क्या?
इस आर्य-जीवन की मलिनता में भला हो हर्ष क्या?
गांधी मिटाने को उसे थे आप हरिजन बन गये,
स्वातंत्र्य के इस अंग को संपन्न करके [illegible] न।

८

उपवास पर उपवास कर, थी जान उसमें डाल दी,
सुविधा स्वयं सरकार ने उनके लिए तत्काल दी।
धारा नयी चलने लगी थी अब विचार-क्षेत्र में,
नव ज्योति थी आने लगी राष्ट्रीयता के नेत्र में।

९

यों एकता पर प्राण-पण से थे महात्मा जी जुटे,
पर राजनीतिक व्यक्तियों के सोच यह, थे कम घुटे।
थी अंत में जागृति सभी संघर्ष की संहारिणी
विद्वेष बुद्धि निवारिणी, सद्भाव की संचारिणी।

१०

अब क्रांति का था सूत्र कर में शिष्ट मध्यम वर्ग के,
जिसको प्रभावित कर नहीं सकते बिना उत्सर्ग के।
वे सत्य की प्रतिमूर्ति गांधी ही दिखा सकते उन्हें,
बढ़ती हुई नव भावनाओं से मिला सकते उन्हें।

११

अनहीनता उनको न जनता की सुहाती थी कभी,
अति वृद्धि जीवन-मान की भी थी नहीं भाती कभी।
उनके लिए सुकुमार जीवन का स्वरूप कुरूप था
वह सद्गुणों के ह्रास के ही मार्ग के अनुरूप था।

१२

थी धनिक-निर्धन-बीच की खाई बड़ी विस्तृत हुई,
अधिकांश जनता इसलिए माया पड़ी थी मृत हुई।
इसके लिए वे शुद्ध साधन पर लगाते बल रहे,
है साध्य उत्तम ही नहीं, साधन जहाँ निर्मल रहे।

१३

तत्काल धनिकों को मिटाना वे न तो भी चाहते,
वे प्रेम से इस विषमता के सिंधु को अवगाहते।
उससे उठाकर मंच निर्मल जल बहाना चाहते,
इस मेल की ही मधुर धारा में नहाना चाहते।

१४

कुछ अधिकारी किन्तु, प्रतिगामी उन्हें थे मानते,
सिद्धान्त-भक्त समाजवादी तक ही वे ठानते।
था समझता था कृषक-भारत को हिलाता था उसे,
जो हरिजनों का अंक में लेकर, मिलाता था उसे।

१५

उसका प्रतीक बना चरखा रूप देता दिव्यता,
उत्पन्न करता था सदा बल, चेतना में भव्यता।
करता चरित्र प्रदान पद्धति जो चलाता था नयी
जिसकी अहिंसा विश्वभर को देन है प्रभुतामयी।

१६

उससे अधिक सक्रिय किसे हम क्रांतिकारी जान लें ?
किस भाँति तर्क-वितर्क की नव कल्पना को मान लें ?
उसमें छिपा मानव, स्वयं आकृष्ट कर लेता हमें,
व्यक्तित्व अपनी ओर को है सहज हर लेता हमें।

१७

पद्मा उसे सुमना उसे, क्या अर्थ रखता है कहो ?
उस मूर्ति के माधुर्य का रस कौन चखता है कहो ?
उसका कथन था सत्य का या प्रेम का पथ जो गहो,
तो साहसी पहले बनो, निर्भीक होकर दृढ़ रहो।

१८

"हिंसा बुरी है, किंतु कायरता बुरी उससे कहीं
है एक अनुशासन बिना कुछ त्याग की भी गति नहीं।"
संतप्त भारत की स्वयं वह बन गया प्रतिमूर्ति था,
भारत स्वयं था भारतीय अभाव की वह पूर्ति था।

१९

निर्णय करने कार्य वह कांग्रेस से भी हट गया,
आश्रय नहीं था किंतु जब आता कभी संकट नया।
नेता नहीं था वास्तविक, सम्मति सदा देता रहा
इस भाँति नौका नीति की था वह स्वयं खेता रहा।

७०

यूरोप का जब युद्ध उनचालीस सन में छिड़ गया,
तब था उपस्थित प्रश्न हिंसा या अहिंसा का नया।
उत्पन्न आशंका हुई कांग्रेस युद्ध कर के थे,
बस, प्रश्न आकर ही, निरर्थक कष्ट क्यों उसके सहे!

७१

कुछ कर दिखाने के लिए नेता स्वयं भी व्यग्र थे
आरंभ करने के लिए सोचे उपाय समग्र थे।
कैसे सफल हो ? प्रश्न था टेढ़ा न पाते हार थे
रुकते न थे उर-मध्य जो उठते अपूर्व उभार थे।

७२

हो प्रेरणा कोई तभी जनता बढ़े आगे यहाँ,
सहयोग का सम्मानपूर्वक मार्ग था निश्चित कहाँ!
जब आप राष्ट्रिय राज तो यह कार्य अपना हो सके
इस भाँति ही कांग्रेस का बस सत्य सपना हो सके।

७३

गांधी अहिंसा को नहीं थे किन्तु तजना चाहते
विपरीत अपनी अंतरात्मा के न भजना चाहते।
थे वे सशस्त्र सहायता के पक्ष में आते नहीं
था युद्ध हिंसात्मक, इसमें वे कुछ कर पाते नहीं।

२४

बहुत-से थे अटल, पर था ध्यान भी जन-शक्ति का,
उसकी अमल अनुरक्ति का, उसकी निरंतर भक्ति का।
स्वातंत्र्य के संकल्प को थे पूर्णतः पहचानते,
खोना नहीं अवसर इसे भी वे अधिक थे जानते।

२५

ठुकरा चुकी सरकार थी सहयोग के प्रस्ताव को,
थी क्षुब्ध जनता देखकर उसके अनादर-भाव को।
प्रेरित हुए तब देश-प्रेम स्वतंत्रता के भाव से,
वे युद्ध में सम्मिलित अपने सहज शुद्ध स्वभाव से।

२६

राजी हुए थे बस, "अहिंसा युद्ध में न प्रयुक्त हो,
अन्यत्र नीति वही रहे भारत सदा को मुक्त हो।"
थे छटपटाते लोग आजादी किसी विध प्राप्त हो,
ऐसा न हो कि कहीं निराशा देश में फिर व्याप्त हो।

२७

गांधी स्वयं नव प्रेरणा संचित थे भर दे रहे,
मानो स्वयं संपूर्ण भारत-भावना थे ले रहे।
चालीस-इकतालीस में भय था कि जापानी बढ़े,
संदेह के हिंडोल पर वे देश-अभिमानी चढ़े।

२२

स्वदेश को पीड़ित किया, पर जब नहीं सरकार ने,
तब दूसरा ही मार्ग पकड़ा राष्ट्र—नीति—विचार ने।
पीड़ा बढ़ी इतनी कि सहना अब रहा संभव नहीं,
बस, असहयोग बिना न पाई अन्य औषधि भी कहीं।

२३

तब कांग्रेस—महासमिति ने बम्बई की गोद में,
निर्णय किया, सुनकर जिसे था देश व्याकुल मोद में।
"अंग्रेज भारत छोड़ दो बस लौट जाओ गेह को,
अब और कुछ होगा नहीं है, छोड़ दो संदेह को।"

२४

प्रस्ताव "भारत छोड़ दो" की गूँज थी सर्वत्र ही,
"तत्काल हो स्वाधीन, सर्वस्वतंत्र भारत की मही।
यह ब्रिटिश शासन हो रहा उसके पतन का हेतु है,
दुर्बल बनाने को उसे समुदित हुआ यह केतु है।

२५

स्वाधीन भारत है प्रतीक, समस्त जंबू द्वीप का,
कल्याण में इसके छिपा, कल्याण दूर—समीप का।
यह प्रश्न है केवल नहीं कांग्रेस की जय—शक्ति का,
है स्वत्व यह जन-शक्ति का, यह है न केवल व्यक्ति का।"

२६

प्रस्ताव था स्वीकार अंतिम रूप से जब रख के,
सहसा मचा शासन यहाँ इस वज्र-सम आघात से।
बस पकड़ नेतागण लिये दिन निकलने के पूर्व ही,
यह युद्ध का आरंभ था, अशुभ और अपूर्व ही।

२७

इसके अनन्तर छोड़ भारत को गये अंग्रेज थे,
वे विवश थे सब आगस्त से, क्रूर थे, जो तेज थे।
भारत स्वतंत्र हुआ हुआ है राज अपना देश में,
है पग बढ़ाता जा रहा तल्लीन दृढ़ उद्देश्य में।

२८

केवल स्वराज्य मिला, नहीं है राम-राज्य मिला अभी,
आदर्श गांधी का रहा जो पूर्ण होगा ही कभी।
उसका दिखाया मार्ग ही है विश्व के कल्याण का,
है प्रेम का ही पंथ केवल मनुजता के त्राण का।

२९

है रक्तहीन स्वराज्य किसको कब मिला इतिहास में?
जिसको महात्मा ने दिलाया भारतीय विश्वास में।
स्वातंत्र्य के पश्चात्, पर जो घिर गई काली घटा,
उसके कुमरस से झेलनी का हृदय जाता है फटा।

४०

बुझते हुए देखे गये सारे प्रभाकर विलीन हो,
थी एक उज्ज्वल ज्योति, जो जलती रही थी पीन हो।
वह सत्य का आकाशदीप, विनाश की चट्टान से,
ऐसा बचाता पोत को, अपने अलौकिक मान से।

४१

"हे राम !" कहता, पेरिस पर वह दिखाता छवि कुसुम,
या मलयगिरि पर विरल ज्यों आलोक-दाता रवि स्वयं।
अंतिम किरण से नील नभ में जो सुयश-सौरभ भरा,
भासित रहेगी उस विभा से भव्य भारत की धरा।

सहायता-संकेत

पहला सर्ग

छंद

१ कारागार—बंदीगृह, जेल।

२ अनुयायी—पीछे-पीछे चलने वाला अनुगामी अनुचर।

कसमस—व्याकुल हो गए।

३ अनुकरणीय—जैसा ही करने के योग्य नकल करने लायक।

भूरि भोगी—बहुत से भोग करनेवाला।

कर्मठ—अत्यन्त कर्मशील।

४ ध्रुव—अचल एक तारा जो उत्तर दिशा में स्थिर रहता है।

कातर—दुखी।

५ ललाम—सुन्दर।

पदाम्बुज—चरण-कमल।

मंडित—अलंकृत भूषित।

विमलाम्बरा—निर्मल वस्त्रों वाली।

६ लोकोत्तर—अलौकिक अद्भुत।

दृष्टिपात—निगाह डालना देखना।

चारु—सुन्दर।

८ गिरा—वाणी।

ओज—प्रताप प्रकाश।

स्फूर्ति—फुर्ती तेजी।

९ पारस—एक पत्थर होता है जिससे छूकर लोहा भी सोना हो जाता है।

सार—लोहा।

सौरभ—सुगंध।

१ निर्भीक—निडर।

जन्म-स्वत्व—पैदा होने के समय से ही अधिकार।

११ चाकर = सेवक गुलाम।

१४ निर्मित = बने हुए।
क्रूराशय = दुष्ट हृदयवाले।
कुलीन = ऊँचे कुल का खानदानी।

१५ कलुषता = पाप मलिनता।
कालिमा = स्याही कलौंस।

२१ दुस्ताप = कठोर ताप।

१८ अभिरामता = सुंदरता।
रक्ती = भारी अच्छी कमानी।

सातवाँ सर्ग

छंद

१ कर्मण्य = उद्यमी काम कुशल।

३ निस्तारिणी = तारने वाली।

४ कल्प = ब्रह्मा का एक दिन जिसमें १४ मन्वन्तर या ४३२ वर्ष होते हैं।

५ तनुज = पुत्र।

६ पृष्ठपोषक = पीठ ठोकने वाला।

८ आत्म-निर्णय = अपना फैसला आप करना।

आवेश = जोश।
उग्र = तीव्र प्रचंड।
नव-नियम = नया नियम।
इस नियम के अनुसार सब एशियावासियों को अपना नाम रजिस्टर में लिखवाना तथा अंगूठे और अंगुलियों के निशान देना अनिवार्य था।

९ तात्पर्यभित = तत्वपूर्ण।
प्रतिपादित = प्रमाणपूर्वक कथित।

१ बोथा और स्मट्स = दक्षिणी अफ्रीका में अंग्रेजी जनरल थे।

१२ गात्र = शरीर।

१३ द्रुमावलि = द्रुम का समूह।

१४ भग्न = टूट गई।
मुकुल = अधखिला।

१५ पराश्रित = दूसरे के सहारे पर निर्भर।

१७ धारा = प्रवाह।

१८ संशोधन = सुधार करना

१९ हितघातिनी—कल्याण का विनाश करने वाली।

२१ टेक—प्रतिज्ञा मान मर्यादा।
दुस्तर—जो कठिनता से पार की जा सके।

२६ १ जनवरी १९०८ को गांधीजी पहले पहल कैदी हुए थे।
विच्छन—मग्न।

२८ दिनमणि—सूर्य

३ निर्वेद—सरकस तीरो का कोप।
दर्शन—जो कठिनता से बीता जाय।

१२ भित्तियाँ—दीवारें।

१३ वनिता—स्त्री।

१४ सार—टीकाक कापिलीह।
समतर—अधिक बने।

१६ दुशासी—पापात्मा।

१७ बल—बाण

१८ अनुकूल—उत्साह।

१९ हृतप्राण—जिसका प्राण मारा गया हो प्राणहीन।

४ कंज—कमल।

४१ धाश्वस्त—आश्वासन दिया गया धैर्य बंधाया गया।
दुराचरित—बुरा ढंग।

४५ धीरता—धृष्टता बजूर्ग हरिश्चंद्री झण्डा—राजा हरिश्चंद्र का प्रताप।
शैब्या—राजा हरिश्चंद्र की रानी।

४६ सुद्ध—प्रसन्नतापूर्वक।
मनोज्ञ—सुन्दर।

४७ काफिर—अफ्रीका की एक असभ्य, हब्शी जाति।
मलालय—पाखाना।
क्षुद्र—नीच।

४८ गिरधा—गिर के द्वारा।

आठवाँ सर्ग

छंद

१ रणभीरु—संग्राम से डरने वाली।

३ सत्यसुखी—सत्य ही जिसका धरम हो।

५ श्रांत—थके हुए।

६ अद्रि—पर्वत।

८ धीमान—बुद्धिमान।

गई थी। इसमें शासन को निरंकुश अधिकार दिये गये थे। संदेह पर किसी को भी गिरफ्तार कर लें। इसी के विरोध में ६ अप्रैल १९१९ को देश के नगर नगर गाँव-गाँव में हड़ताल तथा सभाएँ हुईं। सभी लोग सम्मिलित हुए। देश का वातावरण बदल गया और सत्याग्रह के श्रीगणेश के लिए भूमि तैयार हो गई।
रोधक=रोकनेवाला।

३९ शोणित=रक्त।
निरंकुश=अंकुशरहित बेरोक।

४ प्रत्यूह—बाधा विघ्न।
रोधक—रोकने वाला।
दुर्व्यूह—कठिन किला।

४२ दुर्धर्ष—जिसका दबाना कठिन हो प्रबल।
दुर्मद—कठोर कानून।

४५ कम कम्प—शीत से कम्पन।

४६ पलवल—उत्तरप्रदेश व पंजाब की सीमा पर जी आई पी० रेलवे का स्टेशन है।

४७ फणी—सर्प।

४८ भीरु—डरपोक।

४९ दुर्दमन—कठोर दमन।
ऊर्ध्वगमन—ऊपर को जाना।

५ संयोग—संयुक्त सम्पर्क।

दसवाँ सर्ग

छंद

१ पंजाब में जाते समय पल वल स्टेशन पर गांधीजी गिरफ्तार किये गये थे।

२ दमन-निपात—अनीति का त्याग।

४ कदन—सेना युद्ध के समय वीरों का आह्वान।
अवरोध—रोकना बाधा डालना।

६ जलधि—समुद्र।
ज्वार—समुद्र की बहुत ऊँची-ऊँची लहरें।

बारहवाँ सर्ग

छन्द

१ भौंकते=धुआँ देते।

३ पृथक निर्वाचन=अलग चुनाव।

आमरण=मरण-पर्यंत मरने तक।

अनशन=भोजन न करना।

पक्ष=पंख।

४ पूना-पैक्ट=इस पैक्ट (समझौता) में ब्रिटिश मंत्री ने पृथक निर्वाचन हटा लिया था।

क्षिप्र=शीघ्र।

९ प्राण-पण=प्राणों की बाजी।

१ उत्सर्ग=त्याग।

११ अवगाहते=बाहु लेते।

१४ प्रतिगामी=पीछे के जाने वाला।

१५ प्रतीक=चिह्न।

पद्धति=रीति नियम।

१६ सक्रिय=क्रियाशील कर्मशील।

१९ निर्बंध=बंधनरहित।

नौका=नाव।

२१ समग्र=सम्पन्न।

२४ अनुरक्ति=प्रीति अनुराग।

२९ उपनिवेश=नई आबादी (कालोनी)।

३४ 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव—७ ८ अगस्त १९४२ को बम्बई में कांग्रेस महा-समिति ने पास किया था।

३५ प्रतीक=चिह्न निशान।

३७ ताटकीन=तत्काल जमीमें लगा हुआ।

३९ रक्त-हीन=जिसके लिए रक्त न बहाना पड़ा हो। बिना हिंसात्मक युद्ध के

४ पीन=पुष्ट।

आकाशदीप=प्रकाश भवन जो समुद्र के तट पर से जहाजों का मार्ग-प्रदर्शन करता है।

बारहवाँ सर्ग

छन्द

१ मोचते=मुग्ध देते।

३ पृथक निर्वाचन=अलग चुनाव।

आमरण=मरण-पर्यंत मरने तक।

अनशन=भोजन न करना।

सत्र=यज्ञ।

६ पूना-पैक्ट=इस पैक्ट (समझौता) में ब्रिटिश मंत्री ने पृथक निर्वाचन हटा लिया था।

क्षिप्र=शीघ्र।

९ प्राण-पण=प्राणों की बाजी।

१ उत्सर्ग=त्याग।

११ भवमाकुले=बाहु केले।

१४ प्रतिगामी=पीछे ले जाने वाला।

१५ प्रतीक=चिह्न।

पद्धति=रीति नियम।

१६ सक्रिय=क्रियाशील कर्म शील।

१९ निर्बंध=बंधनरहित।

नौका=नाव।

२१ समग्र=समस्त।

२४ अनुरक्ति=प्रीति अनुराग।

२९ उपनिवेश=नई आबादी (कालोनी)।

३४ 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव—७ ८ अगस्त १९४२ को बम्बई में कांग्रेस महा-समिति ने पास किया था।

३५ प्रतीक=चिह्न निशान।

३७ तल्लीन=संलग्न उसीमें लगा हुआ।

३९ रक्त-हीन=जिसके लिए रक्त न बहाना पड़ा हो।

बिना हिंसात्मक युद्ध के

४ पीन=पुष्ट।

आकाशदीप= प्रकाश-भवन जो समुद्र के तट पर से जहाजों का मार्ग प्रदर्शन करता है।

पीन=महान्।

वेदिका=वेदी प्रार्थना की वेदी। १ जनवरी १९४८ को गांधीजी की हत्या प्रार्थना की वेदी पर ही की गई थी।

अस्तगिरि=अस्ताचल,
सूर्य छिपता है।

आलोकदाता=प्रकाश
वाला।

भासित=प्रकाशित
उज्ज्वल।